24. पूर्वगामी चर्चा को देखते हुए, यह अपील सफल होती है और तद्नुसार मंजूर की जाती है । आक्षेपित आदेश ऊपर उपदर्शित सीमा तक अपास्त किया जाता है । यदि प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 द्वारा आवेदन किया गया है और यदि अभी तक विनिश्चय नहीं किया गया है तो सेशन न्यायाधीश अब जमानत के लिए आवेदन का इसके गुणागुण के आधार पर और विधि के अनुसार विनिश्चय करेंगे ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2018] 3 उम. नि. प. 79

नगय्या और एक अन्य

बनाम

श्रीमती चौदम्मा (मृत) विधिक प्रतिनिधियों के मार्फत और एक अन्य

8 जनवरी, 2018

न्यायमूर्ति अरुण मिश्रा और न्यायमूर्ति मोहन एम. शांतानागौडर

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 32 [सपठित हिंदू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 की धारा 4(ख)] – अवयस्क द्वारा वाद – कौटुंबिक संपत्ति में अवयस्क के हक के लिए उसके बड़े भाई द्वारा वाद-मित्र के रूप में उसका प्रतिनिधित्व किया जाना – वाद-मित्र के रूप में उसकी नियुक्ति न्यायालय द्वारा या उसकी अनुज्ञा से न होना – यदि कोई व्यक्ति कुटुम्ब की संपत्ति में अवयस्क के हित या हक को संरक्षित करने के लिए वाद-मित्र के रूप में न्यायालय में वाद फाइल करता है, तो न्यायालय द्वारा या उसकी अनुज्ञा से वाद-मित्र के रूप में उसकी नियुक्ति न होने के बावजूद भी वह विधिमान्य तौर पर उसका प्रतिनिधित्व कर सकता है, चाहे ऐसा व्यक्ति उसका नातेदार ही क्यों न हो बशर्ते उसका हित अवयस्क के हित के प्रतिकूल न हो ।

इस मामले के तथ्यों के अनुसार, इस अपील में अपीलार्थियों (वाद में क्रमशः वादी सं. 1 और 2) द्वारा एक वाद यह घोषणा करने की प्रार्थना करते हुए फाइल किया गया था कि वाद की अनुसूची में की संपत्ति

अपीलार्थियों के साथ-साथ उनके पिता (वाद में प्रतिवादी सं. 1/इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 2) की संयुक्त संपत्ति है और वे उक्त संपत्ति में दो-तिहाई हिस्से के हकदार हैं और उनके पिता द्वारा प्रतिवादी सं. 2/प्रत्यर्थी सं. 1 के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख वाद की अनुसूची में की संपत्ति में उनके दो-तिहाई हिस्से पर आबद्धकर नहीं है । वाद फाइल करने के समय इस अपील में अपीलार्थी सं. 2 की आयु लगभग 17 वर्ष थी । अपीलार्थी सं. 1/वादी सं. 1 ने अपीलार्थी सं. 2 का बड़ा भाई होने के नाते न केवल अपनी ओर से अपितु द्वितीय अपीलार्थी-द्वितीय वादी (जो अवयस्क था) की ओर से भी वाद फाइल किया । विचारण न्यायालय ने गुणागुण के आधार पर वाद अपास्त कर दिया । प्रथम अपील न्यायालय ने असफल वादियों द्वारा फाइल की गई नियमित अपील मंजूर की और वाद को डिक्रीत किया । असफल प्रतिवादी सं. 2 संपत्ति की विक्रेता ने प्रथम अपील न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलौर के समक्ष द्वितीय अपील फाइल की । उच्च न्यायालय द्वारा अपील मंजूर की गई और वाद को मुख्य रूप से इस आधार पर खारिज कर दिया कि वादी सं. 1 बड़ा भाई होने के नाते वादी (प्रतिवादी सं. 1) के पिता के जीवनकाल के दौरान वादी सं. 2 के संरक्षक के रूप में कार्य नहीं कर सकता था, क्योंकि वादी सं. 1/अपीलार्थी सं. 1 को किसी सक्षम न्यायालय द्वारा अवयस्क वादी के संरक्षक रूप में नियुक्त नहीं किया गया था । चूंकि प्रथम प्रतिवादी, वादी सं. 2 का पिता है, इसलिए वह स्वाभाविक संरक्षक था और केवल वह ही वादी सं. 2 का प्रतिनिधित्व कर सकता था, कोई अन्य नहीं । इन वादियों ने उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वाद-मित्र की न्यायालय द्वारा नियुक्ति करने का न केवल कोई उपबंध है, अपितु न्यायालय की अनुज्ञा लेना भी आवश्यक नहीं है । तथापि, यहां तक कि अवयस्क प्रतिवादियों की बाबत भी, विभिन्न उच्च न्यायालय लगातार यह दृष्टिकोण अपनाते रहे हैं कि वहां भी डिक्री अपास्त नहीं की जा सकती है, जहां प्रतिवादी का प्रतिनिधित्व करने के लिए वादार्थ संरक्षक की नियुक्ति हेतु कतिपय औपचारिकताओं का पालन नहीं किया गया है । उच्च न्यायालयों ने अवयस्क प्रतिवादियों के मामले में यह मत व्यक्त किया है कि जहां संहिता के आदेश 32, नियम 3 के अधीन संबंधित न्यायालय की अनुज्ञा नहीं ली गई है, किंतु डिक्री पारित की गई है, वहां अवयस्क प्रतिवादी पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ने पर ऐसी डिक्री को अपास्त

नहीं किया जा सकता है । मुख्य कसौटी यह है कि डिक्री को अपास्त करने के लिए अवयस्क प्रतिवादी पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ा होना चाहिए । अब यह सुस्थिर है और संहिता के आदेश 32 के उपबंधों के अनुसार भी है कि जो व्यक्ति स्वस्थचित है, जो वयस्क है, जो अवयस्क का प्रतिनिधित्व और उसके हित की संरक्षा कर सकता है, जो भारत का निवासी है और उसका हित अवयस्क के हित के प्रतिकूल नहीं है, अवयस्क का उसके वाद-मित्र के रूप में प्रतिनिधित्व कर सकेगा । ऐसा व्यक्ति, जो अवयस्क वादी का वाद-मित्र के रूप में प्रतिनिधित्व कर रहा है, उसी वाद में प्रतिवादी के रूप में पक्षकार नहीं होगा । संहिता के आदेश 32, नियम 6 और 7 में विनिर्दिष्ट रूप से यह उपबंधित है कि वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक न्यायालय की इजाजत के बिना कोई भी धन या जंगम संपत्ति प्राप्त नहीं करेगा और न्यायालय की इजाजत के बिना कोई करार या समझौता नहीं करेगा । हिंदू संरक्षकता अधिनियम के अधीन उपबंधित नैसर्गिक संरक्षक के अधिकार और निर्बंधन अवयस्क की ओर से वाद-मित्र द्वारा वाद फाइल करने की प्रक्रिया का विरोध नहीं करते हैं । इसमें न केवल कोई अभिव्यक्त प्रतिषेध है, अपितु संहिता के आदेश 32 के अनुशीलन से यह दर्शित होता है कि विधान-मंडल ने जहां-कहीं वाद-मित्र के अधिकार को निर्बंधित करना समुचित समझा है, उसने संहिता के आदेश 32 के नियम 6 और 7 में इसके बारे में अभिव्यक्त रूप से उपबंध किया है । आदेश 32, के नियम 9 में, अन्य बातों के अतिरिक्त, यह स्पष्ट किया गया है कि जहां वाद-मित्र इस निमित्त सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक नहीं है और ऐसे नियुक्त या घोषित संरक्षक द्वारा, जो यह वांछा करता है कि उसे वाद-मित्र के स्थान पर नियुक्त किया जाए, आवेदन किया जाता है, वहां जब तक कि न्यायालय का उन कारणों से जो उसके द्वारा लेखबद्ध किए जाएंगे, यह विचार न हो कि संरक्षक को अवयस्क का वाद-मित्र नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए, वह वाद-मित्र को हटा देगा । संहिता के आदेश 32, नियम 12, 13 और 14 में अवयस्क वादी को, वयस्क होने पर, वाद को आगे चलाने या परित्याग करने का विनिश्चय करने के लिए सशक्त किया गया है । अतः, वयस्क हो जाने पर यदि वादी वाद को आगे चलाने का निर्वाचन करता है, तो वह ऐसा एक आवेदन देकर कर सकता है, जिसके परिणामस्वरूप वाद-मित्र अवयस्क द्वारा वयस्क होने की तारीख से, अवयस्क वादी का प्रतिनिधित्व करना बंद कर देगा । संहिता के आदेश 32, नियम 12 में अवयस्क वादी से इस विकल्प की अपेक्षा की गई है कि वह या तो वाद को आगे चलाए या वाद का परित्याग कर दे और इसमें कतई यह उपबंध नहीं है कि अवयस्क वादी द्वारा वयस्क होने

पर यदि कोई ऐसा निर्वाचन नहीं किया जाता है, तो इस आधार पर वाद को खारिज कर दिया जाना चाहिए । यदि वाद के लंबित रहने के दौरान न्यायालय को यह ज्ञात होता है कि अवयस्क वादी वयस्क हो गया है, तो न्यायालय द्वारा ऐसे वादी से यह कहे जाने की आवश्यकता होती है कि क्या वह वाद को आगे चलाना चाहता है या नहीं । दूसरे शब्दों में, अवयस्क को, जो मामले के लंबित रहने के दौरान वयस्क हो गया है, वाद के लंबित रहने के बारे में अवश्य सूचित किया जाना चाहिए और ऐसी सूचना के अभाव में अवयस्क पर वाद के लंबित रहने की जानकारी होने का अभ्यारोपण नहीं लगाया जा सकता है । अतः ऐसे अवयस्क के विरुद्ध, जो वयस्क हो गया है, कोई प्रतिकूल आदेश किए जाने से पूर्व न्यायालय द्वारा ऐसे व्यक्ति को सूचना दी जानी चाहिए । निस्संदेह, प्रस्तुत मामले में, तथ्यों और परिस्थितियों के अधीन ऐसा अवसर उद्भूत नहीं हुआ था, चूंकि वादी सं. 2 वयस्क हो जाने पर वाद को चलाता रहा है और इससे यह अभिप्रेत है कि उसने वाद को आगे चलाने का निर्वाचन किया था । हो सकता है संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 और हिंदू संरक्षकता अधिनियम से उद्भूत सिद्धांत संहिता के आदेश 32 के अधीन नियुक्त होने वाले वाद-मित्र के लिए प्रासंगिक न हों । प्रतिवादी का प्रतिनिधित्व करने के लिए वादार्थ संरक्षक या किसी वाद में वादी का प्रतिनिधित्व करने के लिए वाद-मित्र की नियुक्ति केवल उस वाद तक ही सीमित होती है और उस वादार्थ संरक्षक/वाद-मित्र का उन्मोचन होने के पश्चात् उस संरक्षक के हिंदू संरक्षकता अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (ख) के अधीन यथा परिभाषित अधिकार/कर्तव्य (यदि उसका कोई प्रतिकूल हित नहीं है) स्वयमेव संरक्षक के रूप में जारी रहते हैं । दूसरे शब्दों में, संहिता के आदेश, 32, नियम 1 के अधीन अवयस्क का वाद में प्रतिनिधित्व करने वाला वाद-मित्र हिंदू संरक्षकता अधिनियम के अधीन नियुक्त संरक्षक के अधिकार और कर्तव्य नहीं छीन लेगा, जब तक कि ऐसे संरक्षक का कोई प्रतिकूल हित न हो या ऐसे सम्यक् रूप से नियुक्त संरक्षक को इस अधिनियम के अनुसार हटाया नहीं जाता है । प्रस्तुत मामले में, प्रत्यर्थी सं. 2/प्रतिवादी सं. 1 यद्यपि वादी सं. 2 का पिता है, तो भी वादी सं. 2 का वर्तमान वाद में उसके संरक्षक के रूप में प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता था, क्योंकि उसका हित वादी सं. 2 के हित के प्रतिकूल था । वादी सं. 2 द्वारा वाद में विक्रय विलेख की विधिमान्यता को प्रश्नगत करते हुए संपत्ति के विक्रेता अर्थात् नैसर्गिक संरक्षक के विरुद्ध अनेक अभिकथन किए गए हैं । संपत्ति को किसी विधिमान्य कारण और कुटुंब की आवश्यकता के बिना बेचने की प्रत्यर्थी सं. 2 (प्रतिवादी सं. 1) की कार्रवाई वाद की विषयवस्तु है ।

दूसरी ओर, वादी सं. 1 (वादी सं. 2 का बड़ा भाई) ने, जिसका वादी सं. 2 के हित के प्रतिकूल कोई हित नहीं है, वादी सं. 2 का उसके वाद-मित्र के रूप में समुचित रूप से प्रतिनिधित्व किया है । वादी सं. 2 ने वादी सं. 1/अपने वाद-मित्र के विरुद्ध, वयस्क हो जाने पर, एक भी अभिकथन नहीं किया है । अवयस्क-वादी सं. 2 वाद फाइल करने की तारीख से एक वर्ष के भीतर वयस्क हो गया था । पूर्वोल्लिखित वाद तारीख 21 अप्रैल, 1985 को फाइल किया गया था, तब वादी सं. 2 की आयु 17 वर्ष थी । इस प्रकार, वादी सं. 2 तारीख 20 अप्रैल, 1986 को या आस पास वयस्क हो गया था । अभि. सा. 1 (वादियों का प्रथम साक्षी) का साक्ष्य तारीख 15 अक्तूबर, 1992 को अभिलिखित किया गया था, जिसका यह अर्थ है कि किसी भी साक्षी का साक्ष्य अभिलिखित करने से काफी पूर्व वादी सं. 2 वयस्क हो गया था और उसने तब वाद जारी रखने का निर्वाचन किया था । यह उल्लेख करना भी सुसंगत है कि वादी सं. 2 वयस्क होने की तारीख से लेकर इस तारीख तक अपने आप मामले को जारी रखे हुए है । इसलिए, पूर्वोल्लिखित कारणों से उच्च न्यायालय वादी सं. 2 को वाद से बेदखल करने के लिए स्वतंत्र नहीं था । यद्यपि इस न्यायालय के समक्ष यह दर्शित करने के लिए अभिलेख प्रस्तुत नहीं किया गया है कि वादी सं. 2 ने अपने वयस्क हो जाने पर वाद-मित्र को उन्मोचित करने के लिए औपचारिक आवेदन फाइल किया था या नहीं, फिर भी वास्तविकता यह है कि विचारण न्यायालय से लेकर इस न्यायालय तक उसने स्वयं ही कार्यवाहियों को जारी रखा है । इस बात से मुकदमेबाजी को जारी रखने का उसका आशय स्पष्ट रूप से दर्शित होता है । उसने अपने दावे का परित्याग न करके सिविल कार्यवाही को जारी रखने का निर्वाचन किया है । उपरोक्त चर्चा को देखते हुए, इस न्यायालय की यह राय है कि हिंदू संरक्षकता अधिनियम के उपबंधों का अवलंब लेते हुए वादी सं. 2 को वाद चलाने से रोकने वाला आक्षेपित आदेश न्यायोचित नहीं है । (पैरा 8, 11, 12, 13, 14, 15 और 17)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2006]	ए. आई. आर. 2006 केरल 138 : **गोपालस्वामी गौंडर** बनाम **रामास्वामी कौंडर** ;	7
[1983]	ए. आई. आर. 1983 पंजाब 406 : **चतरभुज गोयल** बनाम **गुरप्रीत सिंह** ;	8

[1974] (1974) 1 आई. एल. आर. दिल्ली 825 :
श्री मोहम्मद युसुफ और अन्य बनाम
श्री रफीकुद्दीन सिद्दीकी ; 8

[1973] ए. आई. आर. 1973 मद्रास 12 :
रंगाम्मल बनाम **अवयस्क अप्पासामी और अन्य** ; 8

[1972] ए. आई. आर. 1972 मद्रास 859 :
कालियाम्मल, अवयस्क, संरक्षक पट्टा गोवंडन द्वारा प्रतिनिधित्व बनाम **रामास्वामी गोवंडन** ; 6

[1972] ए. आई. आर. 1972 इलाहाबाद 81 :
के. कुमार बनाम **ओंकार नाथ** ; 6

[1960] ए. आई. आर. 1960 राजस्थान 189 :
आनंदराम और **एक अन्य** बनाम **माधो लाल और अन्य** ; 8

[1954] ए. आई. आर. 1954 इलाहाबाद 599 :
बृज किशोर लाल बनाम **सतनारायण लाल एंड कं.** । 8

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2017 की सिविल अपील सं. 22969.

2004 की नियमित द्वितीय अपील सं. 1102 में कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलौर के तारीख 8 जनवरी, 2013 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध संविधान के अनुच्छेद 133 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री निखिल मजीठिया (यादव नरेंद्र सिंह के लिए)

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री निशांत पाटिल, प्रसन्ना मोहन और अनूप जैन

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति मोहन एम. शांतानागौडर ने दिया ।

न्या. शांतानागौडर – इस अपील में असफल वादियों द्वारा 2004 की नियमित द्वितीय अपील सं. 1102 में कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलौर द्वारा तारीख 8 जनवरी, 2013 को पारित किए गए निर्णय को प्रश्नगत किया गया है ।

2. वे तथ्य, जिनसे यह अपील उद्भूत हुई, इस प्रकार हैं । इस अपील में अपीलार्थियों (वाद में क्रमशः वादी सं. 1 और 2) द्वारा 1989 का मूल वाद सं. 228 यह घोषणा करने की प्रार्थना करते हुए फाइल किया

गया था कि वाद की अनुसूची में की संपत्ति अपीलार्थियों के साथ-साथ उनके पिता केमपय्या (वाद में प्रतिवाद सं. 1/इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 2) की संयुक्त संपत्ति है और वे उक्त संपत्ति में दो-तिहाई हिस्से के हकदार हैं और पिता-केमपय्या (वाद में प्रतिवाद सं. 1/इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 2) द्वारा प्रतिवादी सं. 2/प्रत्यर्थी सं. 1 चौदम्मा के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख वाद की अनुसूची में की संपत्ति में उनके दो-तिहाई हिस्से पर आबद्धकर नहीं है । स्थायी व्यादेश के अनुतोष के लिए भी ईप्सा की गई थी । कतिपय अन्य तथ्य भी अभिवाचित किए गए थे, जो इस अपील के निपटारे के लिए तात्विक नहीं हैं । यह उल्लेख करना सुसंगत है कि वाद फाइल करने के समय अर्थात् 24 जनवरी, 1985 को इस अपील में अपीलार्थी सं. 2 अर्थात् कृष्णा की आयु लगभग 17 वर्ष थी । अपीलार्थी सं. 1/वादी सं. 1 ने अपीलार्थी सं. 2 का बड़ा भाई होने के नाते न केवल अपनी ओर से अपितु द्वितीय अपीलार्थी-द्वितीय वादी (जो अवयस्क था) की ओर से भी वाद फाइल किया ।

3. विचारण न्यायालय ने गुणागुण के आधार पर वाद अपास्त कर दिया । प्रथम अपील न्यायालय ने असफल वादियों द्वारा फाइल की गई नियमित अपील सं. 90 मंजूर की और वाद को डिक्रीत किया । असफल प्रतिवादी सं. 2 चौदम्मा/संपत्ति की विक्रेता ने प्रथम अपील न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलौर के समक्ष नियमित द्वितीय अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपील मंजूर की और वाद को मुख्य रूप से इस आधार पर खारिज कर दिया कि वादी सं. 1 बड़ा भाई होने के नाते वादी (प्रतिवादी सं. 1 के पिता केमपय्या के जीवनकाल के दौरान वादी सं. 2 के संरक्षक के रूप में कार्य नहीं कर सकता था, क्योंकि वादी सं. 1/अपीलार्थी सं. 1 को किसी सक्षम न्यायालय द्वारा अवयस्क वादी सं. 2 के संरक्षक रूप में नियुक्त नहीं किया गया था । चूंकि प्रथम प्रतिवादी, वादी सं. 2 का पिता है इसलिए वह स्वाभाविक संरक्षक था और इसलिए केवल वह ही वादी सं. 2 का प्रतिनिधित्व कर सकता था, कोई अन्य नहीं । यह उल्लेखनीय है कि विचारण न्यायालय में वाद में वादी सं. 2 का प्रतिनिधित्व करने के लिए वादी सं. 1 की सक्षमता की बाबत कोई विवाद्यक नहीं उठाया गया था । यहां तक कि प्रथम अपील न्यायालय में भी ऐसा प्रश्न नहीं उठाया गया था और इसलिए इस पर विचार नहीं किया गया था । तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने द्वितीय अपील में पहली बार ऐसा प्रश्न उठाने की अनुज्ञा दी थी, चूंकि यह विशुद्ध रूप से एक विधि का प्रश्न है ।

4. अतः, इस अपील में विनिश्चित किया जाने वाला एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या प्रथम वादी, अवयस्क द्वितीय वादी (वाद फाइल करने के समय) का बड़ा भाई होने के कारण अवयस्क की ओर से उसके वाद-मित्र/संरक्षक के रूप में वाद फाइल कर सकता था या नहीं ।

5. उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचते हुए कि प्रथम वादी अवयस्क-द्वितीय वादी के संरक्षक के रूप में कार्य नहीं कर सकता था, हिंदू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम (जिसे इसमें इसके पश्चात् "हिंदू संरक्षकता अधिनियम" कहा गया है) की धारा 4(ख) का अवलंब लिया । हिंदू संरक्षकता अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (ख) निम्नलिखित है :–

(ख) "संरक्षक" से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जिसकी देखरेख में किसी अप्राप्तवय का शरीर या उसकी सम्पत्ति या उसका शरीर और सम्पत्ति दोनों हों और इसके अन्तर्गत आते हैं –

(i) नैसर्गिक संरक्षक,

(ii) अप्राप्तवय के पिता या माता की विल द्वारा नियुक्त संरक्षक;

(iii) न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक; तथा

(iv) किसी प्रतिपाल्य अधिकरण से सम्बन्ध रखने वाली किसी अधिनियमिति के द्वारा या अधीन संरक्षक की हैसियत में कार्य करने के लिए सशक्त व्यक्ति;

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उच्च न्यायालय ने यह विनिर्णय दिया है कि प्रतिवादी सं. 1 अवयस्क वादी सं. 2 का पिता होने के कारण वादी सं. 2 का स्वाभाविक संरक्षक है और परिणामतः वादी सं. 1 अवयस्क वादी की ओर से संरक्षक के रूप में कार्य नहीं कर सकता था, विशिष्ट रूप से जब उसे किसी सक्षम न्यायालय द्वारा संरक्षक के रूप में नियुक्त नहीं किया गया था । हमारी सुविचारित राय में, उच्च न्यायालय ऐसा निष्कर्ष निकालते हुए पूर्णतः दिग्भर्मित हुआ है ।

6. इस बारे में कोई विवाद नहीं किया जा सकता है कि वादी सं. 1 हिंदू संरक्षकता अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (ख) में यथा विनिर्दिष्ट "संरक्षकता" के अर्थान्तर्गत नहीं आता था और नहीं आता है । किंतु वर्तमान तथ्य हिंदू संरक्षकता अधिनियम के उपबंधों द्वारा शासित नहीं होते हैं, बल्कि वे सिविल प्रक्रिया संहिता (जिसे इसमें इसके पश्चात् "संहिता"

कहा गया है) के आदेश 32 द्वारा शासित होते हैं । वर्तमान संविवाद का विनिश्चय करने के लिए संहिता के आदेश 32, नियम 1, 3, 6, 7, 9, 12, 13 और 14 (कर्नाटक राज्य में यथासंशोधित, चूंकि मामला कर्नाटक राज्य से है) में यथा अंतर्विष्ट निम्नलिखित उपबंधों का उल्लेख करना सुसंगत होगा :–

1. **अवयस्क वाद-मित्र द्वारा वाद लाएगा** – अवयस्क द्वारा हर वाद उसके नाम में ऐसे व्यक्ति द्वारा संस्थित किया जाएगा जो ऐसे वाद में अवयस्क का वाद-मित्र कहलाएगा ।

स्पष्टीकरण – इस आदेश में "अवयस्क" से वह व्यक्ति जिसने भारतीय अवयस्कता अधिनियम, 1875 (1875 का 9) की धारा 3 के अर्थ में अपनी वयस्कता प्राप्त नहीं की है, अभिप्रेत है जहां वाद उस अधिनियम की धारा 2 के खण्ड (क) और खण्ड (ख) में वर्णित विषयों में से किसी विषय या किसी अन्य विषय के संबंध में हो ।

2. **जहां वाद-मित्र के बिना वाद संस्थित किया जाए वहां वादपत्र फाइल से निकाल दिया जाएगा** – (1) जहां अवयस्क द्वारा या उसकी ओर से वाद, वाद-मित्र के बिना संस्थित किया जाता है वहां प्रतिवादी यह आवेदन कर सकेगा कि वादपत्र फाइल से निकाल दिया जाए और खर्चे उस प्लीडर या अन्य व्यक्ति द्वारा दिया जाएं जिसने उसे उपस्थित किया था ।

(2) ऐसे आवेदन की सूचना ऐसे व्यक्ति को दी जाएगी और उसका आक्षेप (यदि कोई हों) सुनने के पश्चात् न्यायालय उस विषय में ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे ।

3. **वाद-मित्र या संरक्षक होने के लिए अर्हताएं** – (1) जो व्यक्ति स्वस्थचित है और वयस्क है वह अवयस्क के वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक की हैसियत में कार्य कर सकेगा :

परन्तु यह तब जब कि ऐसे व्यक्ति का हित अवयस्क के हित के प्रतिकूल न हो और वाद-मित्र की दशा में वह प्रतिवादी न हो या वादार्थ संरक्षक की दशा में वह वादी न हो ।

(2) नियुक्त या घोषित संरक्षकों को वरीयता दी जाएगी और केवल उन कारणों से अधिक्रांत किया जाएगा जो लेखबद्ध किए जाएंगे – जहां अवयस्क का ऐसा संरक्षक है जो सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित किया गया है वहां जब तक कि न्यायालय का उन

कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, यह विचार न हो कि अवयस्क का इसमें कल्याण है कि दूसरे व्यक्ति को उसके वाद-मित्र की हैसियत में कार्य करने के लिए अनुज्ञात किया जाए या उसको वादार्थ संरक्षक नियुक्त किया जाए, ऐसे संरक्षक से भिन्न कोई व्यक्ति, यथास्थिति, न तो इस प्रकार कार्य करेगा और न इस प्रकार नियुक्त किया जाएगा ।

(3) जहां प्रतिवादी अवयस्क है, वहां न्यायालय उसकी अवयस्कता के तथ्य के बारे में समाधान हो जाने पर उचित व्यक्ति को ऐसे अवयस्क के लिए वादार्थ संरक्षक नियुक्त करेगा । इस उप-नियम के अधीन संरक्षक के रूप में नियुक्त व्यक्ति, यदि उसकी नियुक्ति का पर्यवसान निवृत्ति या इस प्रयोजन के लिए किए गए आवेदन पर न्यायालय के आदेश द्वारा हटाए जाने या उसकी मृत्यु के कारण न हो गया हो तो, वह उस वाद या वाद में उद्भूत होने वाली सभी कार्यवाहियों के पूरे दौरान में, जिनके अंतर्गत अपील या पुनरीक्षण की कार्यवाहियां और किसी डिक्री के निष्पादन की कार्यवाहियां आती हैं, उसी हैसियत में बना रहेगा और ऐसी किन्हीं कार्यवाहियों में उक्त संरक्षक पर किसी आदेशिका की तामीली यदि सम्यक् रूप से की जाती है तो ऐसी कार्यवाहियों के प्रयोजनों के लिए उचित तामीली समझी जाएगी ।

(4) वादार्थ संरक्षक की नियुक्ति के लिए आदेश अवयस्क के नाम में और उसकी ओर से या वादी द्वारा किए गए आवेदन पर अभिप्राप्त किया जा सकेगा । जहां आवेदन वादी द्वारा किया गया है, जहां कहीं आवश्यक हो, ऐसे व्यक्तियों की सूची उनकी उपयुक्तता के क्रम में उपवर्णित करेगा जो अवयस्क वादार्थ प्रतिवादी के लिए संरक्षक के रूप में कार्य करने के लिए सक्षम और अर्हित हों ।

(5) पिछले पूर्ववर्ती उप-नियम में निर्दिष्ट आवेदन, चाहे वादी द्वारा किया गया हो या अवयस्क प्रतिवादी की ओर से किया गया हो, इस तथ्य को सत्यापित करने वाले शपथ-पत्र द्वारा समर्थित होगा कि जो बातें वाद में विवादग्रस्त हैं उनमें जो हित अवयस्क का है, उस हित के प्रतिकूल हित प्रस्थापित संरक्षक या प्रस्थापित संरक्षकों में से किसी संरक्षक का नहीं है और प्रस्थापित संरक्षक या संरक्षकों ऐसे नियुक्त किए जाने के लिए ठीक व्यक्ति हैं । शपथ-पत्र में प्रत्येक मामले की परिस्थितियों के अनुसार सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या

घोषित किसी विद्यमान संरक्षक, यदि कोई है, की विशिष्टियों, उस व्यक्ति का, यदि कोई है, नाम और पता, जो अवयस्क का वस्तुतः संरक्षक है, उन व्यक्तियों के नाम और पते, यदि कोई हैं, जो, या तो नैसर्गिक या वस्तुतः संरक्षक या सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक की स्थिति में जो नातेदारी या हित होने के कारण या वाद में अवयस्क के लिए संरक्षकों के रूप में कार्य करने के लिए उपयुक्त व्यक्ति हैं, कार्य करने के लिए अनुज्ञात नहीं है, का भी उल्लेख किया जाएगा ।

(6) अवयस्क के वाद के लिए संरक्षक की नियुक्ति के लिए आवेदन के साथ किसी मृत पक्षकार के विधिक प्रतिनिधि को अभिलेख पर लाने वाले आवेदन के साथ संबद्ध नहीं किया जाएगा ।

(7) कोई भी आदेश उपरोक्त उप-नियम (4) के अधीन किए गए आवेदन पर तब तक के सिवाय नहीं किया जाएगा जब तक कि अवयस्क और उसके किसी ऐसे संरक्षक को जो ऐसे प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित किया गया है जो इस निमित्त सक्षम है या जहां ऐसा संरक्षक नहीं है वहां अवयस्क के पिता को या जहां पिता नहीं है वहां माता को या जहां पिता या माता नहीं है वहां अन्य नैसर्गिक संरक्षक को या जहां पिता, माता या अन्य नैसर्गिक संरक्षक नहीं है वहां उस व्यक्ति को जिसकी देखरेख में अवयस्क है, सूचना दी गई है और जिस किसी व्यक्ति पर इस उप-नियम के अधीन सूचना की तामील की गई है, उस व्यक्ति की ओर से किया गया कोई भी आक्षेप सुन लिया गया है । इस उप-नियम द्वारा अपेक्षित सूचना आवेदन की सुनवाई के लिए सूचना में नामित दिन से कम-से-कम ठीक सात दिन पूर्व तामील की जाएगी ।

(8) जहां पिछले पूर्ववर्ती उप-नियम में वर्णित व्यक्तियों में से कोई भी व्यक्ति संरक्षक के रूप में कार्य करने के लिए रजामंद नहीं है, वहां न्यायालय संरक्षक के रूप में नियुक्ति के लिए प्रस्थापित अन्य व्यक्ति को या व्यक्तियों में से कुछ को या सभी को या तो साथ-साथ या एक के पश्चात् दूसरे को, जैसा न्यायालय मामले की परिस्थितियों में समीचीन या वाछंनीय समझे, सूचना देगा । न्यायालय उन व्यक्तियों में से, जिन्होंने अपनी सहमति प्रज्ञापित की है, ऐसे व्यक्ति को नियुक्त करेगा, जो वह उचित समझता है, और नियुक्त किए गए व्यक्ति को रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा, यदि वह नियुक्ति के समय

व्यक्तिगत रूप में या प्लीडर के माध्यम से मौजूद न हो, ऐसी नियुक्ति के तथ्य को सूचित करेगा ।

(9) कोई भी व्यक्ति उसकी सहमति के बिना वादार्थ संरक्षक नियुक्त नहीं किया जाएगा और उन मामलों के सिवाय जहां आवेदक स्वयं संरक्षक के रूप में अपनी नियुक्ति के लिए प्रार्थना करता है, जारी की गई सूचनाओं में पक्षकार से स्पष्ट रूप से यह अपेक्षा की जाएगी कि वह संरक्षक के रूप में कार्य करने के लिए अपनी सहमति या इनकारी प्रज्ञापित करे ।

(10) जहां न्यायालय वादार्थ संरक्षक की हैसियत में कार्य करने के लिए किसी व्यक्ति को योग्य या रजामंद नहीं पाता है, वहां न्यायालय अपने अधिकारियों में से किसी को या न्यायालय के प्लीडर को संरक्षक होने के लिए नियुक्त कर सकेगा और निदेश दे सकेगा कि ऐसे संरक्षक की हैसियत में अपने कर्तव्यों के पालन में ऐसे अधिकारी या प्लीडर द्वारा उपगत खर्चे या तो वाद के पक्षकारों द्वारा या पक्षकारों में से किसी एक या अधिक के द्वारा न्यायालय में की किसी निधि में से जिसमें अवयस्क हितबद्ध है, दिए जाएंगे और ऐसे खर्चों के प्रतिसंदाय या उनके अनुज्ञात किए जाने के लिए ऐसे निदेश दे सकेगा जो न्याय और मामले की परिस्थितियों में अपेक्षित हों ।

(11) जब अवयस्क प्रतिवादी के लिए वादार्थ संरक्षक नियुक्त किया जाता है और न्यायालय के ध्यान में यह बात लाई जाती है कि प्रतिवादी की ओर से वाद चलाने के लिए संरक्षक के कब्जे में कोई या पर्याप्त निधि नहीं है और तद्द्वारा अपनी प्रतिरक्षा करने में प्रतिवादी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, तो न्यायालय वादी को समय-समय पर संरक्षक को अपनी प्रतिरक्षा करने के प्रयोजन के लिए धन उधार देने के लिए आदेश देगा और इस प्रकार उधार दी गई सभी धन राशियां वाद में वादी के खर्चों का भाग होंगी । ऐसे आदेश में निदेश दिया जाएगा कि जब-जब न्यायालय द्वारा अपेक्षा की जाए, संरक्षक उसके द्वारा इस प्रकार प्राप्त धन-राशियों का लेखा-जोखा न्यायालय में फाइल करेगा ।

6. **अवयस्क की ओर से वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक को डिक्री के अधीन सम्पत्ति की प्राप्ति** – (1) वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक न्यायालय की इजाजत के बिना न तो –

(क) डिक्री या आदेश के पूर्व समझौते के तौर पर, और

(ख) अवयस्क के पक्ष में डिक्री या आदेश के अधीन,

किसी भी धन या अन्य जंगम सम्पत्ति को अवयस्क की ओर से प्राप्त करेगा ।

(2) जहां वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक अवयस्क की सम्पत्ति का संरक्षक होने के लिए सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित नहीं किया गया है या ऐसे नियुक्त या घोषित किए जाने पर धन या अन्य जंगम सम्पत्ति को प्राप्त करने के लिए ऐसी किसी निर्योग्यता के अधीन है जो न्यायालय को ज्ञात है वहां, यदि न्यायालय सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए उसे इजाजत देता है तो, वह ऐसी प्रतिभूति अपेक्षित करेगा और ऐसे निदेश देगा जिनसे न्यायालय की राय में सम्पत्ति की दुर्व्यय से पर्याप्त रूप से संरक्षा होगी और उसका उचित उपयोजन सुनिश्चित होगा :

परन्तु न्यायालय वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक को डिक्री या आदेश के अधीन धन या अन्य जंगम सम्पत्ति प्राप्त करने की इजाजत देते समय ऐसे कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे, ऐसी प्रतिभूति देने से उस दशा में अभिमुक्त कर सकेगा जिसमें ऐसा वाद-मित्र या संरक्षक –

(क) हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब का कर्ता है और डिक्री या आदेश कुटुम्ब की सम्पत्ति या कारबार के सम्बन्ध में है; अथवा

(ख) अवयस्क का माता या पिता है ।

परंतु न्यायालय अपने विवेकानुसार ऐसे मामलों में प्रतिभूति से अभिमुक्ति दे सकेगा जहां वाद के लिए वाद-मित्र या संरक्षक किसी अविभक्त कुटुंब या किसी थारवाड़ के कर्णावान या आलियासंथन कुटुंब के इजामन का प्रबंधक है और डिक्री, यथास्थिति, ऐसे अविभक्त कुटुंब या थारवाड़ या आलियासंथन कुटुंब के पक्ष में पारित की जाती है ।

7. **वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक द्वारा करार या समझौता** – (1) कोई भी वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक अवयस्क की ओर से कोई करार या समझौता उस वाद के बारे में जिसमें वाद-मित्र या संरक्षक की हैसियत में वह कार्य करता है, न्यायालय की इजाजत के बिना नहीं करेगा जो इजाजत कार्यवाहियों में स्पष्ट रूप से अभिलिखित की जाएगी ।

(2) जहां कोई करार या समझौता करने की इजाजत के लिए या समझौते के अनुसरण में किसी वाद को प्रत्याहृत करने के लिए या किसी अवयस्क या निर्योग्यता के अधीन अन्य व्यक्ति की ओर से कोई अन्य इसी प्रकार की कार्रवाई करने के लिए न्यायालय में आवेदन किया जाता है, तो आवेदन के समर्थन में दिए गए शपथ-पत्र में वह रीति उपवर्णित की जाएगी जिसमें प्रस्थापित समझौता, करार या अन्य कार्रवाई से अवयस्क या निर्योग्यता के अधीन अन्य व्यक्ति के हितों पर प्रभाव पड़ने की संभावना है और कारण भी उपवर्णित किए जाएंगे कि ऐसा समझौता, करार या अन्य कार्रवाई कैसे अवयस्क या निर्योग्यता के अधीन अन्य व्यक्ति के फायदे के लिए प्रत्याशित है, जहां ऐसे किसी मामले में अवयस्क या निःशक्तता से ग्रस्त अन्य व्यक्ति का प्रतिनिधित्व काउंसेल या प्लीडर द्वारा किया जाता है तो उक्त काउंसेल या प्लीडर आवेदन के साथ-साथ इस आशय का एक प्रमाणपत्र भी फाइल करेगा कि प्रस्थापित करार या समझौता या कार्रवाई उसकी राय में अवयस्क या निःशक्तता से ग्रस्त अन्य व्यक्ति के फायदे के लिए है । यदि न्यायालय इस नियम के उप-नियम (1) के अधीन इजाजत दे देता है, तो न्यायालय की डिक्री या आदेश में अभिव्यक्त रूप से यथा पूर्वोक्त समझौता, करार या अन्य कार्रवाई की बाबत शपथ-पत्र और ऊपर वर्णित प्रमाणपत्र पर विचार करने के पश्चात् न्यायालय से इप्सित इजाजत प्रदान करने का उल्लेख होगा और या तो स्वयं डिक्री में या उससे से संलग्न अनुसूची में समझौते या करार या अन्य कार्रवाई की विशिष्टियों को उपवर्णित किया जाएगा ।

(3) न्यायालय की इस प्रकार अभिलिखित इजाजत के बिना किया गया कोई भी करार या समझौता अवयस्क से भिन्न सभी पक्षकारों के विरुद्ध शून्यकरणीय होगा ।

9. **वाद-मित्र का हटाया जाना** – (1) जहां अवयस्क के वाद-मित्र का हित अवयस्क के हित के प्रतिकूल है या जहां उस प्रतिवादी से जिसका हित अवयस्क के हित के प्रतिकूल है, उसकी ऐसी संसक्ति है जिससे यह असंभाव्य हो जाता है कि अवयस्क के हित की संरक्षा वह उचित रूप से करेगा या जहां वह अपना कर्तव्य नहीं करता है या वाद के लम्बित रहने के दौरान भारत के भीतर निवास करना छोड़ देता है वहां या किसी भी अन्य पर्याप्त कारण से उसके हटाए जाने के लिए आवेदन अवयस्क की ओर से या किसी

प्रतिवादी द्वारा किया जा सकेगा और यदि समनुदिष्ट हेतुक की पर्याप्तता के बारे में न्यायालय का समाधान हो जाता है तो, वह वाद-मित्र के तद्नुसार हटाए जाने के लिए आदेश कर सकेगा और खर्चों के संबंध में ऐसा अन्य आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे ।

(2) जहां वाद मित्र या निमित्त सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक नहीं है और ऐसे नियुक्त या घोषित संरक्षक द्वारा जो यह वांछा करता है कि वह वाद-मित्र के स्थान में नियुक्त किया जाए, आवेदन किया जाता है वहां जब तक कि न्यायालय का उन कारणों से जो उसके द्वारा लेखबद्ध किए जाएंगे, यह विचार न हो कि संरक्षक को अवयस्क का वाद-मित्र नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए, वह वाद-मित्र को हटा देगा और तब वाद-मित्र होने के लिए उसके स्थान में आवेदक की नियुक्ति वाद में पहले उपगत खर्चों के संबंध में ऐसे निबन्धनों पर करेगा जो वह ठीक समझे ।

12. **अवयस्क वादी या आवेदक द्वारा वयस्क होने पर अनुसरण की जाने वाली चर्या** – (1) अवयस्क वादी या वह अवयस्क जो वाद में पक्षकार तो नहीं है किन्तु जिसकी ओर से आवेदन लम्बित है, वयस्क होने पर यह निर्वाचित करेगा कि वह वाद या आवेदन आगे चलाया या नहीं ।

(2) जहां वह वाद या आवेदन आगे चलाने का निर्वाचन करता है वहां वह वाद-मित्र के उन्मोचन के आदेश के लिए और स्वयं अपने नाम से आगे कार्यवाही चलाने की इजाजत के लिए आवेदन करेगा ।

(3) ऐसी दशा में उस वाद या आवेदन का शीर्षक इस भांति शुद्ध किया जाएगा कि उसका रूप तत्पश्चात् निम्न प्रकार का हो जाए –

> "क ख, भूतपूर्व अवयस्क अपने वाद-मित्र ग घ, द्वारा, किंतु जो अब वयस्क है ।"

(4) जहां वह वाद या आवेदन का परित्याग करने का निर्वाचन करता है वहां, यदि वह एकमात्र वादी या एकमात्र आवेदक है तो, वह इस आदेश के लिए आवेदन करेगा कि जो खर्चा प्रतिवादी या विरोधी पक्षकार द्वारा उपगत किया गया है या जो उसके वाद-मित्र द्वारा दिया गया है, उस खर्च के प्रतिसंदाय पर वाद या आवेदन खारिज कर दिया जाए ।

(5) इस नियम के अधीन कोई आवेदन एक पक्षीय किया जा सकेगा, किंतु वाद-मित्र को उन्मोचित करने वाला और अवयस्क वादी को स्वयं अपने नाम से आगे कार्यवाही करने के लिए अनुज्ञा देने वाला कोई भी आवेदन वाद-मित्र को सूचना दिए बिना नहीं किया जाएगा ।

13. **जहां अवयस्क सहवादी, वयस्क होने पर वाद का निराकरण करने की वांछा करता है** – (1) जहां अवयस्क सहवादी वयस्क होने पर वाद का निराकरण करने की वांछा करता है वहां वह यह आवेदन करेगा कि सहवादी की हैसियत से उसका नाम काट दिया जाए और यदि न्यायालय का यह निष्कर्ष हो कि वह आवश्यक पक्षकार नहीं है तो न्यायालय खर्चों के संबंध में या अन्यथा ऐसे निबन्धनों पर जो वह ठीक समझे, उसे वाद से खारिज कर देगा ।

(2) आवेदन की सूचना की तामील वाद-मित्र पर, किसी सह-वादी पर और प्रतिवादी पर की जाएगी ।

(3) ऐसे आवेदन के सभी पक्षकारों के और वाद में कि तब तक की गई सभी या किन्हीं कार्यवाहियों के खर्चे ऐसे व्यक्तियों द्वारा दिए जाएंगे जिन्हें न्यायालय निदिष्ट करे ।

(4) जहां आवेदक वाद का आवश्यक पक्षकार है वहां न्यायालय उसे प्रतिवादी बनाए जाने का निदेश दे सकेगा ।

14. **अयुक्तियुक्त या अनुचित वाद** – (1) यदि अवयस्क एक मात्र वादी है तो वह वयस्क होने पर आवेदन कर सकेगा कि उसके नाम में उसके वाद-मित्र द्वारा संस्थित वाद इस आधार पर खारिज कर दिया जाए कि वह अयुक्तियुक्त या अनुचित था ।

(2) इस आवेदन की सूचना की तामील संबद्ध सभी पक्षकारों पर की जाएगी और ऐसी अयुक्तियुक्तता या अनौचित्य के बारे में अपना समाधान हो जाने पर न्यायालय आवेदन को मंजूर कर सकेगा और आवेदन के संबंध में सभी पक्षकारों के खर्चों का और वाद में की गई किसी वाद में हुए खर्चों को देने के लिए आदेश वाद-मित्र को दे सकेगा या ऐसा अन्य आदेश दे सकेगा जो वह ठीक समझे ।

14-क. जब कोई अवयस्क प्रतिवादी वयस्क हो जाता है तो वह या वाद में उसके लिए नियुक्त संरक्षक या वादी उक्त प्रतिवादी को वयस्क घोषित करने और संरक्षक को उन्मोचित करने के लिए

न्यायालय में आवेदन कर सकेगा और उसकी सूचना ऐसे सभी व्यक्तियों को दी जाएगी जो आवेदक नहीं है । जब न्यायालय आदेश करके उक्त प्रतिवादी को अवयस्क घोषित करता है, तो वह उसी आदेश द्वारा संरक्षक को उन्मोचित करेगा और उसके पश्चात् वाद उक्त प्रतिवादी के विरुद्ध वयस्क के रूप में चलाया जाएगा ।

संहिता की धारा 32, नियम 1 के पठन मात्र से पूरी तरह से यह स्पष्ट हो जाता है कि अवयस्क द्वारा हर वाद उसके नाम में ऐसे व्यक्ति द्वारा संस्थित किया जाएगा, जो ऐसे वाद में अवयस्क का "वाद-मित्र" कहलाएगा । इस बात की आवश्यकता नहीं है कि वाद-मित्र हिंदू संरक्षकता अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (ख) के अधीन विनिर्दिष्ट अनुसार आवश्यक रुप से एक सम्यक्तः नियुक्त संरक्षक हो । "वाद-मित्र" ऐसे "अवयस्क" या अन्य व्यक्ति के फायदे के लिए कार्य करता है, जो हिंदू संरक्षकता अधिनियम के अनुसार नियमित रूप से नियुक्त संरक्षक न होने के कारण अपने स्वयं के हितों की देख-रेख करने या अपने वाद का प्रबंध करने के लिए असमर्थ (विधितः असक्षम व्यक्ति) है । वह ऐसे अवयस्क या निःशक्त व्यक्ति के हितों की देख-रेख करने के लिए, जिसका वह किसी विशिष्ट मामले में प्रतिनिधित्व करता है, विशेष रूप से हाजिर होकर न्यायालय के अधिकारी के रूप में कार्य करता है । पूर्वोक्त उपबंध में वाद-मित्र द्वारा अवयस्क की ओर से वाद फाइल करना प्राधिकृत किया गया है । यदि अवयस्क द्वारा वाद-मित्र के बिना कोई वाद संस्थित किया जाता है, तो संहिता के आदेश 32 के नियम 2 के अनुसार वाद-पत्र फाइल से निकाल दिया जाएगा । संहिता के आदेश 32, नियम 1 और 3 में साथ-साथ वाद-मित्र और वादार्थ संरक्षक अर्थात् (क) जहां वाद किसी अवयस्क की ओर से फाइल किया जाता है, और (ख) जहां वाद किसी अवयस्क के विरुद्ध फाइल किया जाता है, के बीच विभेद है । यदि, जहां वाद अवयस्क की ओर से फाइल किया जाता है, वहां वाद-मित्र को वाद संस्थित करने के लिए न्यायालय की अनुज्ञा या इजाजत लेना आवश्यक नहीं है, जबकि यदि वाद किसी अवयस्क के विरुद्ध फाइल किया जाता है, तो वादी के लिए यह आबद्धकर है कि वह ऐसे अवयस्क के लिए न्यायालय द्वारा समुचित वादार्थ संरक्षक नियुक्त करवाए । "वादार्थ संरक्षक" ऐसे न्यायालय द्वारा, जिसमें कोई विशिष्ट मुकदमेबाजी लंबित है, उसी विशिष्ट मुकदमेबाजी में किसी अवयस्क/बालक आदि का प्रतिनिधित्व करने के लिए न्यायालय द्वारा नियुक्त एक विशेष संरक्षक होता है और वादार्थ संरक्षक की प्रास्थिति उसी मुकदमेबाजी में विद्यमान रहती है जिसमें उसकी नियुक्ति की जाती है । विभिन्न उच्च न्यायालयों ने भी इस दृष्टिकोण को अपनाया है ।

कालियाम्मल, अवयस्क, संरक्षक पट्टा गोवंडन द्वारा प्रतिनिधित्व बनाम **रामास्वामी गोवंडन**[1] वाले मामले में मद्रास उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि वाद चलाने हेतु वाद-मित्र के लिए, यदि वह असमर्थ नहीं हो गया है, न्यायालय की मंजूरी की आवश्यकता नहीं है । **के. कुमार** बनाम **ओंकार नाथ**[2] वाले मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा भी यही दृष्टिकोण अपनाया गया था ।

7. **गोपालस्वामी गौंडर** बनाम **रामास्वामी कौंडर**[3] वाले मामले में केरल उच्च न्यायालय ने इस मत की अति स्पष्ट शब्दों में पुष्टि की है । उस मामले में, उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि कोई व्यक्ति, जिसका अवयस्क के हित के प्रतिकूल कोई हित नहीं है, उसके वाद-मित्र के रूप में हाजिर हो सकता है । न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "विधि में ऐसे किसी अवयस्क के लिए, जो या तो वादी के रूप में या याची के रूप में कोई विधिक कार्यवाही संस्थित करता है, वाद-मित्र की नियुक्ति अनुध्यात नहीं है । किसी वाद-मित्र के माध्यम से अवयस्क का प्रतिनिधित्व करने का उद्देश्य विरोधी पक्षकार को केवल इस बात के लिए समर्थ बनाना है कि यदि अवयस्क के विरुद्ध खर्चे के लिए कोई आदेश किया जाता है, तो वह वाद-मित्र को इस पर कार्यवाही करने के लिए कह सके..... ।
>
> जहां अवयस्क कोई कार्यवाही वादी या आवेदक के रूप में संस्थित करता है, तो कोई भी व्यक्ति जिसका उस अवयस्क के हित के प्रतिकूल कोई हित न हो, उसके वाद-मित्र के रूप में नियुक्त हो सकता है । केवल इस तथ्य से, कि अवयस्क की माता सेल्वी को उन निष्पादन कार्यवाहियों में अवयस्क के संरक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था, जिनमें अवयस्क को एक अतिरिक्त प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार बनाया गया था, गोपालस्वामी गौंडर सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21, नियम 90 के अधीन याचिकाएं फाइल करने के प्रयोजन के लिए स्वयं को वाद-मित्र के रूप में प्रस्तुत करने के लिए असमर्थ नहीं हो जाएगा । वाद-मित्र को अपनी वाद-मित्र के रूप में नियुक्ति करवाने की कतई कोई आवश्कयता नहीं थी और न ही

---

[1] ए. आई. आर. 1972 मद्रास 859.

[2] ए. आई. आर. 1972 इलाहाबाद 81.

[3] ए. आई. आर. 2006 केरल 138.

निचले न्यायालय ने उक्त आवेदन को खारिज करके न्यायोचित किया था । यहां तक कि ऐसे मामले में भी, जहां अवयस्क द्वारा अपने वाद-मित्र के माध्यम से कार्यवाहियां संस्थित की जाती हैं, वहां वास्तविक वादी या आवेदक स्वयं अवयस्क ही होता है न कि वाद-मित्र ।"

8. वाद-मित्र की न्यायालय द्वारा नियुक्ति करने का न केवल कोई उपबंध है, अपितु न्यायालय की अनुज्ञा लेना भी आवश्यक नहीं है । तथापि, यहां तक कि अवयस्क प्रतिवादियों की बाबत भी, विभिन्न उच्च न्यायालय लगातार यह दृष्टिकोण अपनाते रहे हैं कि वहां भी डिक्री अपास्त नहीं की जा सकती है, जहां प्रतिवादी का प्रतिनिधित्व करने के लिए वादार्थ संरक्षक की नियुक्ति हेतु कतिपय औपचारिकताओं का पालन नहीं किया गया है । उच्च न्यायालयों ने अवयस्क प्रतिवादियों के मामले में यह मत व्यक्त किया है कि जहां संहिता के आदेश 32, नियम 3 के अधीन संबंधित न्यायालय की अनुज्ञा नहीं ली गई है, किंतु डिक्री पारित की गई है, वहां अवयस्क प्रतिवादी पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ने पर ऐसी डिक्री को अपास्त नहीं किया जा सकता है । मुख्य कसौटी यह है कि डिक्री को अपास्त करने के लिए अवयस्क प्रतिवादी पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ा होना चाहिए । संदर्भ के लिए, **बृज किशोर लाल** बनाम **सतनारायण लाल एंड कं.**[1], **आनंदराम और एक अन्य** बनाम **माधो लाल और अन्य**[2], **रंगाम्मल** बनाम **अवयस्क अप्पासामी और अन्य**[3], **चतरभुज गोयल** बनाम **गुरप्रीत सिंह**[4] और **श्री मोहम्मद युसुफ और अन्य** बनाम **श्री रफीकुद्दीन सिद्दीकी**[5] वाले मामले देखें ।

प्रस्तुत मामले में, वाद अवयस्क की ओर से फाइल किया गया था और इसलिए वाद-मित्र अवयस्क का प्रतिनिधित्व करने के लिए सक्षम था । इसके अतिरिक्त, स्वीकृततः, वादी सं. 2 पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा था ।

9. हिंदू संरक्षकता अधिनियम के अधीन यथापरिभाषित "संरक्षक" की धारणा "वाद-मित्र" या "वादार्थ संरक्षक" की धारणा से एक अलग धारणा है । अवयस्क वादी का "वाद-मित्र" द्वारा या अवयस्क प्रतिवादी का "वादार्थ

---

[1] ए. आई. आर. 1954 इलाहाबाद 599.
[2] ए. आई. आर. 1960 राजस्थान 189.
[3] ए. आई. आर. 1973 मद्रास 12.
[4] ए. आई. आर. 1983 पंजाब 406.
[5] (1974) 1 आई. एल. आर. दिल्ली 825.

संरक्षक" द्वारा प्रतिनिधित्व पूरी तरह से अस्थाई होता है, और वह भी उसी विशिष्ट वाद के प्रयोजन के लिए होता है ।

10. किसी नैसर्गिक संरक्षक या हिंदू संरक्षकता अधिनियम के अधीन यथा परिभाषित सम्यक् रूप से नियुक्त संरक्षक के लिए किसी वाद में अवयस्क वादी या प्रतिवादी का प्रतिनिधित्व करने के लिए कोई बाधा नहीं है । किंतु ऐसे संरक्षक का अवयस्क के विरुद्ध प्रतिकूल हित नहीं होना चाहिए । यदि नैसर्गिक संरक्षक या सम्यक् रूप से नियुक्त संरक्षक का वाद में अवयस्क के विरुद्ध प्रतिकूल हित है, तब, यथास्थिति, वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक सिविल मुकदमेबाजी में अवयस्क का प्रतिनिधित्व नहीं करेगा ।

11. अब यह सुस्थिर और संहिता के आदेश 32 के उपबंधों के अनुसार भी है कि जो व्यक्ति स्वस्थचित है, जो वयस्क है, जो अवयस्क का प्रतिनिधित्व और उसके हित की संरक्षा कर सकता है, जो भारत का निवासी है और उसका हित अवयस्क के हित के प्रतिकूल नहीं है, अवयस्क का उसके वाद-मित्र के रूप में प्रतिनिधित्व कर सकेगा । ऐसा व्यक्ति, जो अवयस्क वादी का वाद-मित्र के रूप में प्रतिनिधित्व कर रहा है, उसी वाद में प्रतिवादी के रूप में पक्षकार नहीं होगा । संहिता के आदेश 32, नियम 6 और 7 में विनिर्दिष्ट रूप से यह उपबंधित है कि वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक न्यायालय की इजाजत के बिना कोई भी धन या जंगम संपत्ति प्राप्त नहीं करेगा और न्यायालय की इजाजत के बिना कोई करार या समझौता नहीं करेगा । हिंदू संरक्षकता अधिनियम के अधीन उपबंधित नैसर्गिक संरक्षक के अधिकार और निर्बंधन अवयस्क की ओर से वाद-मित्र द्वारा वाद फाइल करने की प्रक्रिया का विरोध नहीं करते हैं । इसमें न केवल कोई अभिव्यक्त प्रतिषेध है, अपितु संहिता के आदेश 32 के अनुशीलन से यह दर्शित होता है कि विधान-मंडल ने जहां-कहीं वाद-मित्र के अधिकार को निर्बंधित करना समुचित समझा है, उसने संहिता के आदेश 32, के नियम 6 और 7 में इसके बारे में अभिव्यक्त रूप से उपबंध किया है । आदेश 32, के नियम 9 में, अन्य बातों के अतिरिक्त, यह स्पष्ट किया गया है कि जहां वाद-मित्र इस निमित्त सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक नहीं है और ऐसे नियुक्त या घोषित संरक्षक द्वारा, जो यह वांछा करता है कि उसे वाद-मित्र के स्थान पर नियुक्त किया जाए, आवेदन किया जाता है, वहां जब तक कि न्यायालय का उन कारणों से जो उसके द्वारा लेखबद्ध किए जाएंगे, यह विचार न हो कि संरक्षक को अवयस्क का वाद-मित्र नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए, वह वाद-मित्र को हटा देगा । संहिता के आदेश 32, नियम 12, 13 और 14 में अवयस्क वादी को,

वयस्क होने पर, वाद को आगे चलाने या परित्याग करने का विनिश्चय करने के लिए सशक्त किया गया है । अतः, वयस्क हो जाने पर यदि वादी वाद को आगे चलाने का निर्वाचन करता है, तो वह ऐसा एक आवेदन देकर कर सकता है, जिसके परिणामस्वरूप वाद-मित्र अवयस्क द्वारा वयस्क होने की तारीख से, अवयस्क वादी का प्रतिनिधत्व करना बंद कर देगा । संहिता के आदेश 32, नियम 12 में अवयस्क वादी से इस विकल्प की अपेक्षा की गई है कि वह या तो वाद को आगे चलाए या वाद का परित्याग कर दे और इसमें कतई यह उपबंध नहीं है कि अवयस्क वादी द्वारा वयस्क होने पर यदि कोई ऐसा निर्वाचन नहीं किया जाता है, तो इस आधार पर वाद को खारिज कर दिया जाना चाहिए । यदि वाद के लंबित रहने के दौरान न्यायालय को यह ज्ञात होता है कि अवयस्क वादी वयस्क हो गया है, तो न्यायालय द्वारा ऐसे वादी से यह कहे जाने की आवश्यकता होती है कि क्या वह वाद को आगे चलाना चाहता है या नहीं । दूसरे शब्दों में, अवयस्क को, जो मामले के लंबित रहने के दौरान वयस्क हो गया है, वाद के लंबित रहने के बारे में अवश्य सूचित किया जाना चाहिए और ऐसी सूचना के अभाव में अवयस्क पर वाद के लंबित रहने की जानकारी होने का अभ्यारोपण नहीं लगाया जा सकता है । अतः ऐसे अवयस्क के विरुद्ध, जो वयस्क हो गया है, कोई प्रतिकूल आदेश किए जाने से पूर्व न्यायालय द्वारा ऐसे व्यक्ति को सूचना दी जानी चाहिए । निस्संदेह, प्रस्तुत मामले में, तथ्यों और परिस्थितियों के अधीन ऐसा अवसर उद्भूत नहीं हुआ था, चूंकि वादी सं. 2 वयस्क हो जाने पर वाद को चलाता रहा है और इससे यह अभिप्रेत है कि उसने वाद को आगे चलाने का निर्वाचन किया था ।

12. हो सकता है संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 और हिंदू संरक्षकता अधिनियम से उद्भूत सिद्धांत संहिता के आदेश 32 के अधीन नियुक्त होने वाले वाद-मित्र के लिए प्रासंगिक न हों । प्रतिवादी का प्रतिनिधित्व करने के लिए वादार्थ संरक्षक या किसी वाद में वादी का प्रतिनिधित्व करने के लिए वाद-मित्र की नियुक्ति केवल उस वाद तक ही सीमित होती है और उस वादार्थ संरक्षक/वाद-मित्र का उन्मोचन होने के पश्चात् उस संरक्षक के हिंदू संरक्षकता अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (ख) के अधीन यथा परिभाषित अधिकार/कर्तव्य (यदि उसका कोई प्रतिकूल हित नहीं है) स्वयमेव संरक्षक के रूप में जारी रहते हैं । दूसरे शब्दों में, संहिता के आदेश, 32, नियम 1 के अधीन अवयस्क का वाद में प्रतिनिधित्व करने वाला वाद-मित्र हिंदू संरक्षकता अधिनियम के अधीन नियुक्त संरक्षक के अधिकार और कर्तव्य नहीं छीन लेगा, जब तक कि ऐसे संरक्षक का

कोई प्रतिकूल हित न हो या ऐसे सम्यक् रूप से नियुक्त संरक्षक को इस अधिनियम के अनुसार हटाया नहीं जाता है ।

13. प्रस्तुत मामले में, प्रत्यर्थी सं. 2/प्रतिवादी सं. 1 यद्यपि वादी सं. 2 का पिता है, तो भी वादी सं. 2 का वर्तमान वाद में उसके संरक्षक के रूप में प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता था, क्योंकि उसका हित वादी सं. 2 के हित के प्रतिकूल था । वादी सं. 2 द्वारा वाद में विक्रय विलेख की विधिमान्यता को प्रश्नगत करते हुए संपत्ति के विक्रेता अर्थात् नैसर्गिक संरक्षक के विरुद्ध अनेक अभिकथन किए गए हैं । संपत्ति को किसी विधिमान्य कारण और कुटुंब की आवश्यकता के बिना बेचने की प्रत्यर्थी सं. 2 (प्रतिवादी सं. 1) की कार्रवाई वाद की विषयवस्तु है । दूसरी ओर, वादी सं. 1 (वादी सं. 2 का बड़ा भाई) ने, जिसका वादी सं. 2 के हित के प्रतिकूल कोई हित नहीं है, वादी सं. 2 का उसके वाद-मित्र के रूप में समुचित रूप से प्रतिनिधित्व किया है । वादी सं. 2 ने वादी सं. 1/अपने वाद-मित्र के विरुद्ध, वयस्क हो जाने पर, एक भी अभिकथन नहीं किया है ।

14. अवयस्क-वादी सं. 2 वाद फाइल करने की तारीख से एक वर्ष के भीतर वयस्क हो गया था । पूर्वोल्लिखित वाद तारीख 21 अप्रैल, 1985 को फाइल किया गया था, तब वादी सं. 2 की आयु 17 वर्ष थी । इस प्रकार, वादी सं. 2 तारीख 20 अप्रैल, 1986 को या आस-पास वयस्क हो गया था । अभि. सा. 1 (वादियों का प्रथम साक्षी) का साक्ष्य तारीख 15 अक्तूबर, 1992 को अभिलिखित किया गया था, जिसका यह अर्थ है कि किसी भी साक्षी का साक्ष्य अभिलिखित करने से काफी पूर्व वादी सं. 2 वयस्क हो गया था और उसने तब वाद जारी रखने का निर्वाचन किया था । यह उल्लेख करना भी सुसंगत है कि वादी सं. 2 वयस्क होने की तारीख से लेकर इस तारीख तक अपने आप मामले को जारी रखे हुए है । इसलिए, पूर्वोल्लिखित कारणों से उच्च न्यायालय वादी सं. 2 को वाद से बेदखल करने के लिए स्वतंत्र नहीं था ।

15. यद्यपि, हमारे समक्ष यह दर्शित करने के लिए अभिलेख प्रस्तुत नहीं किया गया है कि वादी सं. 2 ने अपने वयस्क हो जाने पर वाद-मित्र को उन्मोचित करने के लिए औपचारिक आवेदन फाइल किया था या नहीं, फिर भी वास्तविकता यह है कि विचारण न्यायालय से लेकर इस न्यायालय तक उसने स्वयं ही कार्यवाहियों को जारी रखा है । इस बात से मुकदमेबाजी को जारी रखने का उसका आशय स्पष्ट रूप से दर्शित होता है । उसने अपने दावे का परित्याग न करके सिविल कार्यवाही को जारी

रखने का निर्वाचन किया है ।

16. सारतः, वाद-मित्र द्वारा अवयस्क की ओर से कोई वाद फाइल करना या वाद में किसी अवयस्क प्रतिवादी का वादार्थ संरक्षक द्वारा प्रतिनिधित्व करना एक समय-समय पर परखी हुई प्रक्रिया है, जो सिविल मुकदमेबाजी में अवयस्क के हितों की संरक्षा करने के लिए है । "वाद-मित्र" और "वादार्थ संरक्षक" के बीच व्यवहारिक फर्क केवल यह है कि वाद-मित्र वह व्यक्ति होता है जो ऐसे अवयस्क का प्रतिनिधित्व करता है जो कोई वाद प्रारंभ करता है, और वादार्थ संरक्षक ऐसे अवयस्क का, जो वाद में प्रतिवादी है, प्रतिनिधित्व करने के लिए न्यायालय द्वारा नियुक्त व्यक्ति होता है । किसी अवयस्क द्वारा वाद प्रारंभ करने से पूर्व, ऐसे योग्य वयस्क (वाद-मित्र) संबंधी एक भानपूर्वक विनिश्चय किया जाता है, जिसके माध्यम से वाद संस्थित किया जाएगा । वादार्थ संरक्षक न्यायालय द्वारा नियुक्त किया जाता है, जबकि वाद-मित्र न्यायालय द्वारा नियुक्त नहीं किया जाता है । वाद-मित्र और वादार्थ संरक्षक की एक जैसी शक्तियां और उत्तरदायित्व होते हैं । दोनों न्यायालय के नियंत्रणाधीन होते हैं और न्यायालय द्वारा हटाए जा सकते हैं यदि अवयस्क के सर्वोत्तम हित में ऐसा करना अपेक्षित हो ।

17. उपरोक्त चर्चा को देखते हुए, हमारी यह राय है कि हिंदू संरक्षकता अधिनियम के उपबंधों का अवलंब लेते हुए वादी सं. 2 को वाद चलाने से रोकने वाला आक्षेपित आदेश न्यायोचित नहीं है । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता को ध्यान में रखते हुए, मामले का विधि के अनुसार गुणागुण के आधार पर नए सिरे से विनिश्चय करने के लिए इसे उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित करना न्यायसंगत और समुचित होगा । तद्नुसार, यह अपील पूर्वोक्त सीमा तक मंजूर की जाती है, उच्च न्यायालय का निर्णय अपास्त किया जाता है और यह मामला उच्च न्यायालय को विधि के अनुसार गुणागुण के आधार पर नए सिरे से विनिश्चय करने के लिए प्रतिप्रेषित किया जाता है । यह उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है कि हमने मामले के गुणागुण के आधार पर कोई राय व्यक्त नहीं की है । खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाएगा ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.